धन की भेंट

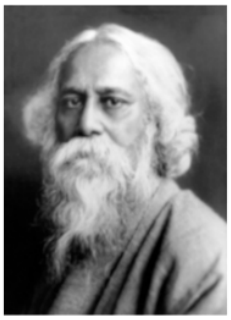

रविंद्रनाथ टैगोर

धन की भेंट

वृन्दावन कुण्डू क्रोधावेश में अपने पिता के पास आकर कहने लगा- "मैं इसी समय आपसे विदा होना चाहता हूं।"

उसके पिता जगन्नाथ कुण्डू ने घृणा प्रकट करते हुए कहा- "अभागे! कृतघ्न! मैंने जो रुपया तेरे पालन-पोषण पर खर्च किया है, उसे चुका कर ही ऐसी धमकी देना।'

जिस प्रकार का खान-पान जगन्नाथ के घर चला करता था उस पर कुछ अधिक व्यय न होता था। भारत के प्राचीन ऋषि मितव्ययता के लिए ऐसी ही वस्तुओं का प्रबन्ध कर लिया करते थे। जगन्नाथ के व्यवहार से ज्ञात होता था वह इस विषय में उन ऋषियों ही के निर्मित आदर्शों पर चलना पसन्द करता था। यद्यपि वह पूर्णरूप से इस आदर्श को निबाहने में असमर्थ था। इसका कारण कुछ यह समझा जा सकता है कि जिस समाज में उसका रहन-सहन था वह अपने प्राचीन आदर्शों से बहुत पतित हो चुका था और कुछ यह कि उसकी आत्मा को शरीर के साथ मिलाये रखने के विषय में प्रकृति की उत्तेजना तीव्र और युक्तियुक्त-संगत थी।

जब तक वृन्दावन अविवाहित था, उसका निर्वाह जैसे-तैसे चलता रहा, किन्तु विवाह के पश्चात् उसने सीमा से बाहर इस उत्तम और सुन्दर आदर्श को, जो उसके महामना पिता ने निर्मित कर रखा था, त्यागना शुरू कर दिया। ऐसा ज्ञात होता था कि सांसारिक सुख-ऐश्वर्य के सम्बन्ध में उसके विचार आध्यात्मिकता से शारीरिकता की ओर परिवर्तित हो रहे हैं और खाने-पीने की न्यूनता से उसे भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी और जो कष्ट भी सामने आते हैं, उसने उन्हें सहना पसन्द न करके संसार के साधारण व्यक्तियों के आचरण का अनुकरण करना आरम्भ कर दिया।

जब से वृन्दावन ने अपने पिता के निर्मित उच्च आदर्श को त्यागा, तभी से पिता और पुत्र में कलह आरम्भ हो गई। इस कलह ने चरम-सीमा का रूप उस समय धारण किया, जब वृन्दावन की पत्नी अधिक रुग्ण हुई और उसकी चिकित्सा के लिए एक वैद्यराज बुलाया गया। यहां तक का व्यवहार भी क्षमा करने के योग्य था; किन्तु जब वैद्यराज ने रोगी के लिए एक अधिक मूल्य की औषधि का निर्णय किया, तो जगन्नाथ ने समझ लिया कि वैद्यराज अयोग्य है और वैद्यक के नियमों से बिल्कुल अपरिचित। बस उसने उसी समय उनको मकान से बाहर निकलवा दिया। वृन्दावन ने पहले तो पिता से काफी अनुनय-विनय की कि औषधि जारी रहे-फिर झगड़ा भी किया, परन्तु पिता के कान पर जूं तक न रेंगी। अन्त में जब पत्नी स्वर्ग सिधर गई तो वृन्दावन का क्रोध अधिक बढ़ गया और उसने अपने पिता को उसका प्राण-घातक ठहराया।

जगन्नाथ ने स्वभावानुसार उसको समझाने का बहुत प्रयत्न किया और कहा- "तुम कैसी नामसझी की बातें करते हो? क्या लोग विभिन्न प्रकार की औषधि खाकर नहीं मरते; यदि मूल्यवान औषधियां ही मनुष्य को जीवित रख सकती तो बड़े-बड़े

राजा-महाराजा क्यों मरते? इससे पहले तुम्हारी मां और दादी मर चुकी हैं, बहू भी मर गई तो क्या हुआ? समय आने पर प्रत्येक व्यक्ति को यहां से कूच करना है।"

वृन्दावन यदि इस प्रकार दु:खी और सचेत होकर वास्तविक परिणाम पर पहुंचने में योग्य न होता, तो सम्भव था कि वह इन बातों से कुछ सान्त्वना प्राप्त कर लेता। इससे पहले मरने के समय उसकी मां और दादी ने औषधि न पी थी और औषधि सेवन न करने की यह रीति बहुत पहले से इस खानदान में चली आई है। नई पौध का चरित्र इतना बिगड़ चुका है कि वह पुराने ढंग पर मरना भी पसन्द नहीं करती।

जिस युग की चर्चा हम कर रहे हैं, उन दिनों अंग्रेज भारत में नए-नए आये थे; किन्तु उस समय भी इस देश के बड़े-बूढ़े अपनी-अपनी औलाद के स्वभाव-विरुध्द ढंग पर आश्चर्य और विकलता प्रकट किया करते और अन्त में जब उनकी एक न चलती तो अपने मुंह से लगे हुए हुक्कों से सान्त्वना प्राप्त करने का प्रयत्न करते।

वास्तविकता यह है कि जिस समय मामला चरम-सीमा को पहुंच गया तो वृन्दावन से न रहा गया और उसने आवेश तथा विकलता के साथ अपने पिता से कहा-"मैं जाता हूं।"

पिता ने उसे दृढ़ देखकर उसी समय आज्ञा दे दी।

और घोषणा करते हुए कह दिया- "चाहे देवता मेरे ढंग को गौहत्या के समान क्यों न समझें, मैं शपथ खाकर कहता हूं कि तुम्हें अपनी धन-संपत्ति से एक कौड़ी भी नहीं दूंगा।"

"यदि मैं तुम्हारी एक पाई तक को भी हाथ लगाऊं तो उस व्यक्ति से भी नीच होऊंगा जो अपनी मां को बुरे भाव से देखता है।" वृन्दावन के मुख से आवेश में निकल गया।

गांव के निवासियों ने अपने-जैसे विचारों के, लम्बे-चौड़े वाद-विवाद के पश्चात् उस छोटे-से परिवर्तन-भरे झगड़े को संतोषपूर्वक देखा। जगन्नाथ ने चूंकि अपने बेटे को अपनी संपत्ति से वंचित कर दिया था, अत: प्रत्येक व्यक्ति उसे सान्त्वना देने का प्रयत्न कर रहा था। वे सब इस विषय में सहमत थे कि केवल पत्नी की खातिर पिता के साथ झगड़ा करने का दृश्य इस नए युग में ही देखा जा सकता है। इसके सम्बन्ध में वे स्वयं जो कारण बताते थे वे भी बहुत असंगत थे। वे कहते थे यदि किसी की पत्नी मर जाये तो बड़ी सरलता से दूसरी प्राप्त कर सकता है, पिता मर जाये तो संसार-भर के धन-ऐश्वर्य के बदले में भी उसे प्राप्त नहीं कर सकता।

इस बात में सन्देह नहीं कि उनका उपदेश हर प्रकार से ठीक था; किन्तु हमें सन्देह है कि दूसरा पिता प्राप्त करने की पीड़ा उस पथ-भ्रष्ट बेटे को कहां तक प्रभावित कर सकती थी। इसके विरुध्द हमारा विचार यह है कि ऐसा अवसर आता तो वह उसे ईश्वरीय अनुकम्पा में सम्मिलित समझता।

वृन्दावन के अलग होने का दु:ख उसके पिता जगन्नाथ को तनिक भी अनुभव न हुआ। इसके कुछ विशेष कारण थे। एक तो यह कि उसके चले जाने से घर का खर्च कम हो गया, दूसरे हृदय से एक भारी चिन्ता दूर हो गई, हर समय उसे इस बात का भय रहता था कि मेरा बेटा मुझे विष देकर न मार दे। जब कभी वह अपना थोड़ा-सा भोजन करने बैठता तो यही विचार उसे विकल कर देता कि इसमें विष न मिला हुआ हो। यही चिन्ता किसी सीमा तक वृन्दावन की पत्नी का स्वर्गवास हो जाने पर दूर हो गई थी, किन्तु अब वह बिल्कुल ही न रही।

जिस प्रकार घने अंधियारे बादलों में चमकीली बिजली और भयंकर तूफानी समुद्र में बहुमूल्य रत्न विद्यमान रहते हैं, उसी प्रकार बूढ़े जगन्नाथ के कठोर हृदय में भी एक निर्बलता शेष थी। वृन्दावन जाते समय अपने साथ अपने चार-वर्षीय पुत्र गोकुलचन्द्र को भी ले गया था। चूंकि उसकी खुराक और वस्त्रों का खर्च बहुत न्यून था इसलिए जगन्नाथ को उससे बहुत प्रेम था। जाते समय जब वृन्दावन उसे अपने साथ ले गया तो सबसे पहले दु:ख और पछतावे की अपेक्षा उसने अपने मन में हिसाब करना शुरू किया कि इन दोनों के चले जाने से खर्च में कितनी कमी हो जाएगी। इस बचत की वार्षिक रकम कहां तक पहुँचेगी और इस बचत को यदि किसी रकम का सूद समझा जाए तो उसका मूलधन कितना हो सकेगा?

जब तक गोकुलचन्द घर में था वह अपनी चंचलता से जगन्नाथ का ध्यान अपनी ओर आकर्षित रखता था; परन्तु उसके चले जाने पर कुछ दिनों में ही बूढ़े को ऐसा अनुभव होने लगा कि घर काटने को दौड़ता है। इससे पहले जिस समय जगन्नाथ पूजा-पाठ में तल्लीन होता तो गोकुलचन्द उसे छेड़ा करता। भोजन करते समय उसके आगे से रोटी या चावल उड़ाकर भाग जाता और स्वयं खा लेता और जब वह आय-व्यय लिखने बैठता तो उसकी दवात लेकर दौड़ जाता, किन्तु अब उसके चले जाने पर ये सब बातें भी दूर हो गईं। जीवन में प्रतिदिन का क्रिया-कर्म उसे भार अनुभव होने लगा। उसे ऐसा मालूम होता था कि इस प्रकार का विश्राम भविष्य के संसार में ही सहन किया जा सकता है। जब कभी वह गोकुल की चंचलता को स्मरण करता तो रजाइयों में उसके हाथों के छेदों या दरी पर कलम-दवात से उसके बनाए

हुए भद्दे चित्रों को देखता तो उसका हृदय कष्ट के मारे बैठ जाता। जगन्नाथ को अपने सोने के कमरे में एक कोने के अन्दर पड़ी हुई पुरानी धोती के टुकड़े दिखाई पड़े तो सहसा उसके नेत्रों से अश्रु बह निकले। वह धोती थी जिसे गोकुल ने दो वर्ष के अल्प समय में फाड़ दिया था तो जगन्नाथ ने उसे झिड़का और बुरा-भला कहा था। किन्तु अब उसने इन टुकड़ों को उठाकर बड़ी सावधानी से अपने सन्दूक में रख लिया और इसकी शपथ खा ली कि यदि गोकुल उसके जीते-जी फिर कभी वापस आ गया तो चाहे वह हर वर्ष एक धोती फाड़े, वह उससे कभी रुष्ट न होगा।

परन्तु गोकुल को न वापस आना था, न आया। गरीब जगन्नाथ दिन-प्रतिदिन वृध्द होता जा रहा था और उसको खाली घर अधिक-से-अधिक भयावना दिखाई पड़ता था।

अन्त में दशा यहां तक पहुंची कि वह सन्तोष से घर में बैठ भी न पाता। मध्यान्ह समय जब गांव के सब लोग अपने-अपने घरों में सोए होते तो जगन्नाथ नारियल हाथ में लिये गलियों में घूमता दिखाई देता। गांव के लड़के जब कभी उसे अपनी ओर आता देखते तो खेल छोड़कर दूर जा खड़े होते और इस प्रकार की पद्य-पंक्ति गाने लगते जिसमें एक स्थानीय कवि ने वृध्द जगन्नाथ के मितव्ययी स्वभाव की प्रशंसा की थी। कोई व्यक्ति भय के मारे उसका वास्तविक नाम इस डर से जबान पर न लाता कि कहीं उसे उस रोज अन्न-जल प्राप्त न हो। अत: लोगों ने उसके अनेक प्रकार के नाम रख छोड़े थे। वृध्द उसे जगन्नाथ कहा करते थे, परन्तु मालूम नहीं छोटे लड़के उसे चिड़ियल क्यों कहते थे। सम्भव है इसका कारण यह हो कि उसका चर्म शुष्क और शरीर रक्तहीन दिखाई देता था। इन्हीं कारणों से वह प्रेत-आत्माओं के समान समझा जाता था।

2.एक दिन मध्यान्ह-समय जब जगन्नाथ स्वभावानुसार गांव की गलियों में आम के छतनारे वृक्षों के नीचे अपना नारियल हाथ में लिये फिर रहा था। उसने देखा कि एक लड़का जो देखने में अपरिचित मालूम होता था, गांव के लड़कों का मुखिया बना हुआ है और उन्हें कोई नई शरारत समझा रहा है। उसके महान चरित्र और उसकी कुशाग्र बुध्दि से प्रभावित होकर सब लड़कों ने इस बात का नियम कर लिया था कि हर काम में उसकी आज्ञानुसार आचरण करेंगे। दूसरे लड़कों की भांति वह वृध्द जगन्नाथ को अपनी ओर आता देखकर भय से भागा नहीं, बल्कि उसके समीप जाकर चादर झाड़ने लगा। उसी समय उसमें से एक जीवित छिपकली निकलकर वृध्द के शरीर पर गिरी और उसकी पीठ की ओर से नीचे उतरकर वन की ओर भाग

गई। भय से वृध्द के हाथ-पांव कांपने लगे। यह देखकर सब लड़के बहुत प्रसन्न हुए और प्रसन्नता से उच्च-स्वर में घोष करने लगे। वृध्द जगन्नाथ बड़बड़ाता और गालियां देता हुआ बहुत दूर निकल गया, किन्तु वह अंगोछा जो प्राय: उसके कन्धों पर पड़ा रहा करता था, सहसा गायब हो गया और दूसरे ही क्षण उस अपरिचित लड़के के सिर पर बंधी हुई पगड़ी के रूप में दिखाई देने लगा।

लड़के की ओर से इस प्रकार की चेष्टा देखकर जगन्नाथ पहले तो कुछ चिन्तित हुआ, फिर वह गांव की प्रतिदिन की कठोरता को इस प्रकार पराजित होते देखकर प्रसन्न भी हुआ। काफी दिनों से लड़के उसकी छाया ही देखकर दूर भाग जाया करते थे और उसे उनसे बोलने तथा बातचीत करने का अवसर ही न मिलता था। अपरिचित लड़का इस शरारत के पश्चात् दूर भाग गया था, किन्तु बहुत से वचन और सांत्वना देने के पश्चात् वह उस वृध्द के समीप आया। फिर दोनों में निम्न बातें होने लगीं।

"बेटा, तुम्हारा नाम क्या है?"

"नितईपाल।"

'घर कहां है?"

"मैं नहीं बताऊंगा।"

"क्यों नहीं बतलाओगे?"

"मैं घर से भागकर आया हूं।"

"भागे क्यों थे?"

"मेरा पिता मुझे स्कूल जाने को कहता था।"

जगन्नाथ के हृदय में विचार आया, ऐसे होनहार लड़के को स्कूल भेजना कैसी व्यर्थ की बात है? वह कैसा लड़के के भविष्य के परिणाम की ओर से आंखें मीचे रहने वाला पिता होगा, जो इसे स्कूल भेजना चाहता है।

थोड़ी देर पश्चात् वह कहने लगा- "अच्छा, तुम मेरे घर रहना पसन्द करोगे!"

लड़के ने उत्तर दिया- "क्यों नहीं।"

उसी दिन से वह लड़का उसके घर रहने लगा। उसे घर में प्रवेश करते हुए इतना भी भय न हुआ, जितना अंधेरे में किसी वृक्ष के नीचे जाने से हो सकता है। इतना ही नहीं, बल्कि उसने अपने वस्त्र और भोजन के विषय में ऐसे निर्भयतापूर्ण ढंग पर प्रश्न करने आरम्भ किये जैसे वह उस घर में वर्षों से परिवार का अंग रहा है। यदि कोई वस्तु उसकी इच्छानुसार न होती तो वह जगन्नाथ से झगड़ा आरम्भ कर देता। जगन्नाथ अपने बेटे को तो डरा-धमका भी लेता, परन्तु उसे बस में लाना सरल न था। उसे उसकी हर बात माननी पड़ती।

गांव के लोग आश्चर्य में थे कि जगन्नाथ ने नितईपाल को क्यों इस प्रकार सिर पर चढ़ा रखा है। यह सर्वविदित था कि वृध्द अब कुछ दिन नहीं तो कुछ सप्ताह का अतिथि है और वे इस बात को सोचकर बहुत दुखित होते थे कि उसके स्वर्ग सिधरने पर उसकी संपत्ति का अधिकारी यही लड़का होगा। वे सब इस बात पर लड़के से ईष्या करने लगे थे। उन्होंने यह भी निश्चय कर लिया कि उसे अवश्य हानि पहुंचाने का प्रयत्न करेंगे; परन्तु जगन्नाथ उसकी ऐसी निगरानी रखता जैसे वह उसकी पसली की हड्डी हो।

कभी-कभी लड़का धमकी देकर कहता- 'मैं घर चला जाऊंगा' ऐसे अवसर पर वृध्द लोभ-लालच का जाल बिछाकर कहता- 'मैं अपनी सारी संपत्ति तुमको ही दे दूंगा।' लड़का हर प्रकार से कम आयु का था, तब भी इस वचन के महत्व को खूब समझता था।

गांव वालों से और कुछ न हो सकता था उन्होंने उस लड़के के बाप के सम्बन्ध में जांच आरम्भ की। उनको यह सोचकर बहुत दु:ख होता था कि उसके माता-पिता उसकी याद में दुखी होंगे। लड़का बड़ा चंचल है, जो उन्हें इस प्रकार छोड़कर भाग आया। वे इसे हजार-हजार गालियां देते होंगे। किन्तु ये सब बातें वे जिस आवेश में करते थे इससे स्पष्ट प्रतीत होता था कि वे न्याय नहीं ईष्या से काम ले रहे हैं।

एक दिन वृध्द को किसी बटोही की जबानी ज्ञात हुआ कि दामोदरपाल अपने बेटे की खोज में समीप के गांवों और कस्बों में फिर रहा है, और कुछ ही समय में वह इस गांव में आना चाहता है। नितई ने जब यह बात सुनी तो सहज भाव से उसके हृदय के प्रेम में आवेश आया। वह उद्विग्नता की दशा में धन-संपत्ति छोड़कर अपने पिता के पास जाने को तैयार हो गया। जगन्नाथ उसे रोकने के लिए प्रत्येक सम्भव रीति से प्रयत्न करता था। अत: उसने कहा- "तुम अपने पिता के पास जाओगे तो वह तुम्हें

पीटेगा, मैं तुम्हें एक ऐसे स्थान पर छिपा दूंगा कि किसी को भी तुम्हारा पता न मिल सके; यहां तक कि गांव वाले भी मालूम न कर सकेंगे।"

इस बात से लड़के के हृदय में आश्चर्य उत्पन्न हुआ और वह कहने लगा- "बाबा! मुझे कहां छिपाओगे? ऐसा भला स्थान तो मुझे भी दिखा दो।"

जगन्नाथ ने उत्तर दिया- "यदि वह स्थान मैं इस समय दिखा दूं तो लोगों को खबर हो जाएगी, रात हो जाने दो।" बच्चों में आश्चर्य-जनक स्थान देखने की उत्कट लालसा होती है, नितई भी उसी तरह यह बात सुनकर प्रसन्न हुआ। उसने अपने हृदय में विचारा कि जब मेरे पिता मेरी खोज करने के पश्चात् वापस चले जाएंगे तो मैं दौड़ लगाकर लड़कों के साथ उस स्थान पर आंख-मिचौनी खेला करूंगा और कोई मालूम न कर सकेगा कि मैं कहां छिपा हूं- वास्तव में उस समय बड़ा आनन्द आयेगा। पिताजी सम्पूर्ण गांव छान मारेंगे और मुझे कहीं न पा सकेंगे, बड़ी दिल्लगी होगी।

मध्यान्ह के समय जगन्नाथ लड़के को कुछ समय के लिए मकान में बन्द करके कहीं चला गया। उसके वापस आने पर नितई ने उससे इतने प्रश्न किए कि वह परेशान हो गया।

अन्त में जब रात हुई तो नितई कहने लगा- "बाबा, अब तो वह स्थान मुझको दिखा दो।"

जगन्नाथ ने उत्तर दिया- "अभी रात नहीं हुई।"

इसके कुछ समय पश्चात् लड़के ने फिर कहा- "बाबा, अब रात बहुत हो गई है, अब तो चलो।"

जगन्नाथ ने धीरे से कहा- "अभी गांव के लोग सोए नहीं हैं।"

नितई फिर एक क्षण के लिए रुका और बोला- "बाबा! इस समय तो सब लोग सो गये हैं, आओ अब चलें।"

रात बहुत जा चुकी थी। गरीब लड़का इतनी देर तक कभी न जागा था, इसलिए उसको जागे रहने में बड़ी कठिनाई पड़ रही थी। अन्त में आधी रात के समय जगन्नाथ लड़के की बांह पकड़कर स्वप्निल गांव की अंधेरी गलियों से रास्ता टटोलता बाहर निकला। सब दिशाएं सूनी थीं, चारों ओर सूनापन था, कभी-कभी कोई

कुत्ता भोंकने लगता तो और कुत्ते भी उसके साथ मिलकर भोंकना आरम्भ कर देते। इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं उसके पैरों की आहट से कोई पक्षी वृक्ष की टहनी से पंख फड़फड़ाता हुआ उड़ जाता। नितई भय से कांप रहा था किन्तु जगन्नाथ ने उसका हाथ दृढ़ता से पकड़ा हुआ था।

कई खेतों में से होकर अन्त में ये लोग जंगल में प्रविष्ट हुए। यहां एक जीर्ण मन्दिर खड़ा हुआ था, जिसमें किसी भी देवता की मूर्ति दिखाई न पड़ती थी।

नितई ने उसे देखकर निराशा- भरे स्वर में कहा-"बस, यही स्थान था?"

यह स्थान उसकी कल्पना से सर्वथा भिन्न था; क्योंकि उसमें कोई आश्चर्य की बात न थी। जब से वह घर से भागा था अनेक बार ऐसे खंडहर मन्दिरों में रातें व्यतीत कर चुका था। इतना होने पर भी आंख-मिचौनी खेलने के लिए यह स्थान सुन्दर था अर्थात् ऐसा कि उसके साथ खेलने वाले लड़के यहां उसकी खोज न कर सकते थे।

जगन्नाथ ने फर्श के बीच से एक पत्थर की सिल उठाई। उसके नीचे आश्चर्य- चकित लड़के को एक तहखाना दिखाई दिया, जिसमें एक धीमा-सा दीप जल रहा था। भय और आश्चर्य दोनों बातें उसके हृदय पर जमी हुई थीं। अन्दर एक बांस की सीढ़ी खड़ी थी। जगन्नाथ नीचे उतरा और नितई भी उसके पीछे हो लिया।

नीचे उतरकर लड़के ने इधर-उधर देखा तो उसे चारों ओर पीतल के टोकने पड़े हुए दिखाई दिए। उसके मध्य में एक आसन बिछा हुआ था और सामने थोड़ा सिन्दूर, घिसा हुआ चन्दन, कुछ जंगली फूल और पूजा की शेष सामग्री रखी हुई थी। लड़के ने अपनी जिज्ञासा-पूर्ति के लिए उन टोकनों में से कुछ के अन्दर हाथ डाला और जब बाहर हाथ निकालकर देखा तो मालूम हुआ कि उनमें रुपये और सोने की मोहरें भरी हुई हैं। इतने में वृध्द जगन्नाथ ने नितई से कहा-"नितई, मैंने तुमसे कहा था न कि अपनी सारी संपत्ति तुम्हें दे दूंगा, मेरे पास कोई अधिक संपत्ति नहीं है, किन्तु जो कुछ भी है वह इन पीतल के टोकनों में भरी है और यह सब मैं आज तुम्हारे हवाले करना चाहता हूं।"

नितई प्रसन्नता के मारे उछल पड़ा और बोला- "सच! क्या तुम इनमें से एक रुपया भी अपने पास न रखोगे?"

वृध्द ने उत्तर दिया- "यदि मैं इसमें से कुछ लूं तो भगवान करे मेरा वह हाथ कोढ़ी हो जाए-किन्तु यह संपत्ति मैं तुम्हें एक शर्त पर देता हूं। यदि कभी मेरा पोता

गोकुलचन्द या उसका भी पोता या परपोता या उसकी औलाद में से कोई व्यक्ति भी इस रास्ते से होकर जाये तो तुम्हारे लिए अनिवार्य होगा कि यह सारी संपत्ति उसको सौंप दो।"

लड़के ने ध्यान से सोचा और निश्चय के साथ विचारा कि वृध्द पागल हो गया है। फिर कहने लगा- "बहुत अच्छा, ऐसा ही करूंगा।"

जगन्नाथ ने कहा-"बस तो इस स्थान पर बैठ जाओ-"

"क्यों?"

"तुम्हारी पूजा की जाएगी।"

लड़के ने चकित होकर पूछा- "यही रीति है!"

वृध्द ने उत्तर दिया- "यही रीति है।"

लड़का उछलकर तुरन्त आसन पर बैठ गया। वृध्द जगन्नाथ ने उसके माथे पर चन्दन लगाया, भृकुटियों के मध्य सिंदुर की बिन्दी लगा दी, जंगली पुष्पों का हार उनके गले में डाला और कुछ मन्त्र उच्चारण करने लगा।

बेचारा नितई देवता की भांति आसन पर बैठा-बैठा उकता गया, क्योंकि उसकी पलकें नींद से भारी हो रही थीं। अन्त में उसने घबराकर कहा-"बाबा!"

परन्तु जगन्नाथ उत्तर दिए बिना ही मन्त्र पढ़ता रहा।

अन्त में मन्त्रों का सिलसिला समाप्त हुआ और जगन्नाथ ने बड़ी कठिनाई से एक टोकने को खींचकर लड़के के सम्मुख रखा और ये शब्द विवशता से उसके मुख से कहलवाये- "मैं सच्चे हृदय से प्रतिज्ञा करता हूं कि इस सारी धन-संपत्ति को गोकुलचन्द कुण्डू या वृन्दावन कुण्डू वल्द जगन्नाथ कुण्डू या गोकुलचन्द कुण्डू के बेटे, पोते, परपोते; या उसकी औलाद के किसी व्यक्ति को जो इसका वास्तविक और योग्य उत्तराधिकारी होगा दे दूंगा।"

अनेक बार शब्दों के कहने में भोले लड़के की चेतना जाती रही और कण्ठ सूखने लगा।

जैसे-तैसे यह रस्म समाप्त हुई, गुफा की वायु, दीपक के धुएं और दोनों के सांस के कारण बुरी मालूम होने लगी। नितई को अपना कण्ठ मिट्टी की भांति सूखा और हाथ-पांव जलते हुए अनुभव हो रहे थे। बेचारे का दम घुटा जा रहा था।

दीपक धीरे-धीरे मध्दिम होता गया, यहां तक कि अन्तिम झोंका खाकर बुझ गया। इसके पश्चात् अंधेरा। नितई को ऐसा लगा कि वृध्द जल्दी-जल्दी सीढ़ी से ऊपर चढ़ रहा है। उसने घबराकर पूछा- "बाबा तुम कहां जा रहे हो?"

जगन्नाथ ने निरन्तर ऊपर की ओर चढ़ते हुए उत्तर दिया- "मैं अब जाता हूं, तुम यहां रहो, यहां तुम्हें कोई ढूंढ़ न सकेगा। वृन्दावन के बेटे और जगन्नाथ के पोते गोकुलचन्द का नाम याद रखना।"

इसके पश्चात् उसने ऊपर जाकर सीढ़ी खींच ली। लड़के ने अवरुध्द और दयनीय स्वर में कहा- "मैं अब अपने पिता के पास जाना चाहता हूं, यहां मुझे भय लगता है।"

जगन्नाथ ने उसकी परवाह न करते हुए गुफा के मुंह पर पत्थर की शिला रख दी। इसके पश्चात् दोनों जंघाओं को मोड़कर झुका और अपने कान पत्थर के समीप लगाकर सुनने लगा। अन्दर से आवाज आई, "बाबाजी! बाबाजी!" फिर किसी भारी वस्तु के फर्श पर गिरने की आवाज सुनाई दी और इसके बाद निस्तब्धता छा गई।

इस प्रकार अपनी संपत्ति उसको सौंपकर वृध्द जगन्नाथ ने जल्दी-जल्दी पत्थर के ऊपर मिट्टी डालनी आरम्भ कर दी। उस पर उसने टूटी-फूटी ईंटें और चूना रख दिया और फिर मिट्टी बिछाकर उसमें जंगली घास और बूटियों की जड़ें गाड़ दीं।

रात सम्भवत: समाप्त हो चुकी थी। परन्तु वह उस स्थान से हटकर घर न जा सका, रह-रहकर अपना कान पृथ्वी पर लगाता और आवाज सुनने का प्रयत्न करता। ऐसा मालूम होता था कि अब भी उस गुफा के अन्दर या पृथ्वी की अथाह गहराइयों में से एक वेदनायुक्त क्रन्दन सुनाई दे रहा है। उसे ऐसा भान होता था कि रात में आकाश पर केवल वही एक आवाज छाई हुई है और संसार के सब व्यक्ति उस आवाज से जागकर बिस्तरों में बैठे उसे सुनने का प्रयत्न कर रहे हैं।...

पागल वृध्द आवेश में आकर और अधिक मिट्टी डाले जाता था। वह चाहता था कि उस आवाज को दबा दे; किन्तु इस पर भी रह-रहकर वह आवाज उसके कानों में आ रही थी- "बाबाजी! हाय बाबाजी!"

उसने पूरी शक्ति से धरती पर पांव मारकर चिल्लाते हुए कहा- "चुप रहो, लोग तुम्हारी आवाज सुन लेंगे।"

फिर भी उसे मालूम हुआ कि "हाय बाबा जी! हाय बापू!" की आवाजें रह-रहकर सुनाई दे रही हैं।

इतने में सूर्य उदय हुआ और जगन्नाथ कुण्डू मन्दिर को छोड़कर खेतों की ओर आ गया।

वहां भी किसी ने उसके पीछे से आवाज दी- "बापू!" घबराहट की दशा में जगन्नाथ ने पीछे फिरकर देखा तो उसका पुत्र वृन्दावन था।

वृन्दावन कहने लगा- "मुझे पता चला है कि मेरा बेटा आपके घर में छिपा हुआ है, उसे मुझे दे दो।"

यह सुनकर वृध्द के नेत्र विस्तृत हो गये, मुंह चौड़ा हो गया और उसने मुड़कर पूछा-"क्या कहा? तुम्हारा बेटा?"

वृन्दावन ने कहा- "हां, मेरा बेटा गोकुल, अब उसका नाम नितईपाल है और मैंने अपना नाम दामोदरपाल प्रसिध्द कर रखा है। तुम्हारी मनहूसी और कंजूसी की बात चारों ओर इतनी अधिक फैल चुकी थी कि विवश होकर मुझे अपना वास्तविक नाम बदलना पड़ा। वरना सम्भव था कि लोग हमारा नाम लेने से भी सकुचाते।"

वृध्द ने धीरे से दोनों हाथ सिर के ऊपर उठाए। उसकी उंगलियां इस प्रकार कांपने लगी, मानो वह वायु में किसी अदृश्य वस्तु के पकड़ने का प्रयत्न कर रही हों। फिर वह अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। जब उसे चेत हुआ तो वह अपने बेटे की बांह पकड़कर उसे घसीटता हुआ पुराने मन्दिर के समीप ले गया और पूछने लगा-"तुम्हें इसके अन्दर से रोने की आवाज सुनाई देती है?"

वृन्दावन ने उत्तर दिया-"नहीं?"

वृध्द ने कहा- "ध्यान से सुनो, कोई आवाज अन्दर से 'बाबाजी! बाबा जी!' कहती सुनाई नहीं देती?"

वृन्दावन ने फिर कान लगाकर उत्तर दिया- "नहीं।"

इससे वृध्द जगन्नाथ की चिन्ता किसी सीमा तक दूर हो गई, साथ ही उसके मस्तिष्क ने भी उसे जवाब दे दिया।

उस दिन के पश्चात् उसकी दशा यह थी कि गांव में आवारा फिरता और लोगों से पूछा करता- "तुम्हें किसी के रोने की आवाज तो नहीं सुनाई देती?"

लोग उसके पागलपन पर ठहाका लगाते।

इसके लगभग चार वर्ष पश्चात् जगन्नाथ मृत्यु-शैया पर पड़ा था। संसार का प्रकाश धीरे-धीरे उसके नेत्रों के सामने से दूर होता जा रहा था और सांस अधिक कष्ट से आने लगी थी। सहसा वह विक्षिप्त अवस्था में उठकर बैठ गया। उसने अपने दोनों हाथ ऊपर को उठा लिये और वायु में इस प्रकार चलाने लगा जैसे किसी वस्तु को टटोल रहा हो और कहने लगा-"मेरी सीढ़ी किसने उठा ली?"

उस भयानक बन्दी-गृह में से, जहां न देखने को प्रकाश और न सांस लेने के लिए वायु थी, बाहर निकलने के लिए सीढ़ी न पाकर वह फिर अपनी मृत्यु-शैया पर गिर पड़ा और जहां संसार की स्थायी आंख-मिचौनी के खेल में कोई छिपने वाला पाया नहीं गया

https://www.hindiadda.com/dhan-kee-bhent/